इतिहास के साथ एक बदसलूकी यह भी

भूपेश कुमार सिंह

कभी गोएबल्स ने न जाने किस पिनक में कह दिया था कि "एक झूठ को सौ बार दुहराओगे तो वह सच लगने लगेगा"। अब गोएबल्स और उसके झूठे सच्चे के खेल को तो परिवर्तनकामी ताकतें इतिहास के कूड़ेदान पर फेंक चुकी हैं, किन्तु अभी भी गोएबल्स के देशी शिष्य इस बात का भरोसा किये हुए हैं कि उनके झूठ न केवल सच लगने लगे हैं वरन् सत्य बन भी जायेंगे।

हिन्दुत्ववादी संगठनों का मुखपत्र 'पांचजन्य' अपने स्तम्भ 'संस्कृति सत्य' (10-1-99) में सड़े-गले मूल्यों को वरेण्य सिद्ध करने के प्रयास में तमाम श्रेष्ठ क्रान्तिकारियों और शहीदों के चरित्र को विद्रूप ढंग से प्रस्तुत करने पर उतारू है। इस लेख के लेखक, साहित्यिक रणवीर सेना के सेनानी वचनेश त्रिपाठी 'साहित्येन्दु' तमाम उपलब्ध साहित्य की अनदेखी करते हुए तमाम ज्ञात तथ्यों का कुछ इस प्रकार अनुसंधान करते हैं कि अनुसंधान का पात्र उनके लिए सुविधाजनक नायक के सांचे में ढल जाता है।

पांचजन्य के 10 जनवरी, 1999 के अंक के नवें पृष्ठ पर प्रकाशित स्तम्भ—जिसका नाम ही 'संस्कृति सत्य' है—उसमें राजगुरू को पुनरुत्थानवादी सिद्ध करने मात्र के लिए तमाम साहित्यिक उलटफेर किये गये हैं। दरअसल चन्द्रशेखर आजाद, भगतसिंह, राजगुरू, बटुकेश्वर दत्त सरीखे क्रान्तिकारियों को उनकी राजनीति से काटकर, जीवन्त मूल्यों वाली संस्कृति नहीं, वरन् देवालय में स्थापित कर पूजा करने की संस्कृति में समेटने का प्रयास खुद अपने आप में एक बौद्धिक बेईमानी है। आत्मकेन्द्रित, स्वार्थलोलुप तथा अदूरदर्शी राजनीतिज्ञ अपने क्षुद्र स्वार्थों के लिए प्रायः क्रान्तिकारियों को उनकी राजनीति से काटकर उनका भाववादी प्रस्तुतीकरण करते रहते हैं। किन्तु किसी भी किस्म के साहित्यकार से ऐसे गर्हित प्रयास की अपेक्षा नहीं की जाती है।"साहित्येन्दु" का 'ऐतिहासिक सत्य' है कि "आजाद के नेतृत्व में जब भगतसिंह, राजगुरू और सुखदेव अंग्रेज पुलिस उपाधीक्षक सांडर्स को गोली मारने गये तो जयगोपाल को संकेत न करते देखकर और यह देखकर कि साण्डर्स मोटर साइकिल स्टार्ट करके चल देना चाहता है उस पर पहली गोली राजगुरू ने चलाई थी।" उनके अनुसार राजगुरू कहते थे कि "साण्डर्स तो मेरी एक ही गोली से खत्म हो गया, भगतसिंह ने पांच गोलियां बेकार ही खर्च कीं" आगे वचनेश त्रिपाठी जी यह भी जोड़ देते हैं—'बात सच थी'। हमें लगता है जैसे भगतसिंह ने पांच गोलियां चलाकर संगठन तथा वचनेश त्रिपाठी जी का नुकसान कर दिया हो। वैसे वचनेश जी को चाहिए कि उस नुकसान की भरपाई के लिए दो-चार लठैत या बजरंगदलियों को लेकर भगतसिंह के उत्तराधिकारियों के यहां जा धमकें।

अब तथ्यों के सम्यक् निरूपण तथा इतिहास के वैज्ञानिक सत्यापन के लिए हम उसी घटना का भगतसिंह, राजगुरू, आजाद आदि के साथी और सहयोगी शिववर्मा का संस्मरण उद्धृत करेंगे। यहां यह बता देना समीचीन होगा कि शिववर्मा न केवल उनके सहयोगी थे वरन् साण्डर्स वध की योजना निर्माण (जो मूलतः स्काट वध की योजना थी) में बराबरी के भागीदार थे। शिववर्मा (संस्मृतियां, पृ. 38) लिखते हैं—

"इस काम के लिए साथियों ने कई दिन पहले से पुलिस दफ्तर के सामने चक्कर लगाना आरम्भ कर दिया था। जगह का निरीक्षण भी पहले से ही कर लिया गया था। अन्त में 17 दिसम्बर 1928 को साण्डर्स काबू में आ गया। पुलिस दफ्तर से मोटर साइकिल पर निकलते समय स्काट पर गोली चलाई जाये यह पहले से ही तय था। भगतसिंह और राजगुरू पुलिस दफ्तर के फाटक के सामने जरा हट कर खड़े थे। कुछ दूर हटकर जयगोपाल साइकिल लिये ऐसे खड़ा था मानो उसमें कुछ खराबी आ गई हो और वह उसे ठीक करने के लिए रुक गया हो। भगतसिंह और राजगुरू को जयगोपाल के इशारे पर आगे बढ़ना था। इनसे थोड़ी दूर पर डी.ए.वी. कालेज की चारदीवारी के अन्दर अपना माउजर पिस्तौल लिये आजाद खड़े थे। अपना काम समाप्त कर भगतसिंह और राजगुरू को कालेज का रास्ता पार कर छात्रावास की ओर जाना था। आजाद का काम था पीछा करने वालों का रास्ता रोक कर दोनों साथियों को भागने का अवसर प्रदान करना। साण्डर्स के दफ्तर से बाहर आते ही जयगोपाल का इशारा पाकर राजगुरू ने उसके मस्तक पर गोली चलाई और पहले ही वार में वह मोटर साइकिल समेत जमीन पर लोटने लगा। किसी प्रकार का शक न रह जाये इसलिए भगतसिंह ने उस पर तीन-चार गोलियां चलाईं..." (फुटनोट में लिखा है : "हमारा विचार लाहौर के पुलिस सुपरिटेण्डेण्ट स्काट को मारने का था। जयगोपाल ने गलती से साण्डर्स को ही स्काट समझ कर इशारा कर दिया था। यह तो साण्डर्स की मृत्यु के बाद पता चला कि लालाजी उसी की लाठी से आहत हुए थे।")

यह हुआ कर्ता का कथन और इस कथन की तथ्यपरकता और विश्वसनीयता इसलिए असंदिग्ध है कि साण्डर्स वध के बाद भी शिववर्मा का न केवल राजगुरू वरन् भगतसिंह और आजाद से सम्पर्क बना हुआ था। इसकी विश्वसनीयता इसलिए भी असंदिग्ध है कि इसके लेखक शिववर्मा हैं। किन्तु शिववर्मा के प्रस्तुतिकरण और वचनेश त्रिपाठी के प्रस्तुतिकरण को साथ रखने पर लगता ही नहीं है कि दोनों एक ही घटना का बयान कर रहे हैं। हमें तो यह लगता है कि शिववर्मा के संस्मरण और वचनेश त्रिपाठी के प्रस्तुतिकरण में उतना ही अन्तर है जितना कि लांगेवाला की लड़ाई और जे.पी.दत्ता की फिल्म 'बार्डर' में है।

अब राजगुरू के घर परिवार और दीक्षा के सम्बन्ध में—वचनेश त्रिपाठी बताते हैं कि राजगुरू 'सदैव संस्कृत का ही पक्ष लेकर' अंग्रेजी का विरोध करते थे। उन्हें संस्कृत की पुस्तक 'लघु सिद्धान्त कौमुदी' पूरी तरह रटी हुई थी और वे 'तर्कतीर्थ' थे। यही नहीं "17-18 वर्ष शोध कर कुछ अप्रकाशित तथ्य भी ढूंढ़े गये।" अब राजगुरू के साथ चार-पांच वर्षों की संगति के दौरान शिववर्मा जो कुछ जान सके वह इस प्रकार है :

"संस्कृत पाठशाला में प्रवेश तो ले लिया लेकिन फीस का क्या हो? वह कैसे अदा की जाये? भाई के पास से जो रुपया आता था वह खाना, कापी-किताब भर के लिए ही था। गुरू जी को एक नौकर की तलाश थी। उन्होंने राजगुरू को अपने पास रख लिया। काम था खाना बनाना, बर्तन मांजना, कपड़े धोना, झाड़ू पोंछा करना, बाजार से सामान लाना, गुरू जी के पैर दबाना आदि। इस काम के बदले राजगुरू को मिलता—खाना और बगैर फीस दिये कक्षा में बैठने का अधिकार। धीरे-धीरे पढ़ाई कम और घर का कामकाज अधिक होने लगा—खाना देकर इतना अधिकार तो उनको मिल ही गया था। परिणाम वही हुआ जो होना था—राजगुरू की गुरू जी से अनबन हो गई और उन्होंने पढ़ाई तथा नौकरी दोनों को ठोकर मार

(शेष पृष्ठ 40 पर)

सम्पन्न हुए बल्कि इस दुर्गति के लिए सीधे जिम्मेदार व्यवस्था पोषक व 'साइबर' नायक चन्द्रबाबू नायडू फिर से प्रचण्ड बहुमत के साथ सत्ता पर सवार हुए। मास-मीडिया के मूढ़ चन्द्र बाबू नायडू की चुनावी सफलता का श्रेय उनके ''सुशासन'' और तकनीकी लटकों-झटकों को देते हैं और उन्हें 'साइबराबाद' का मुख्य कार्यकारी मानते हैं जो कि अपनी सरकार को सूचना व संचारतंत्र द्वारा चलाना चाहते हैं।

जब एक तरफ हैदराबाद अधुनातन तकनीकी शब्दावली, विश्व के महाबली नेता के भाषणों से बलबला रहा था, उसी समय आन्ध्र के किसानों के समक्ष पूंजीवाद के सेवक विज्ञान का जन-विरोधी चेहरा और भी घिनौने रूप में नुमाया हो उठा। कर्ज में डूबे हुए इस प्रदेश के किसानों से कर्ज की वसूली को सम्भव बनाने के निमित्त विज्ञान के एक और टहलुए—चिकित्सक परिदृश्य पर बौद्धिक वेश्यावृत्ति करते नजर आये। इन चिकित्सकों की मदद से गुंटूर जिले के रेन्टाचिन्टाल गांव के 26 किसानों ने अपने गुर्दे एक ऐसे व्यक्ति को बेच दिये जो कि मानव अंगों का ही व्यापार करता है। इन किसानों के अतिरिक्त 100 से अधिक अन्य किसान भी अपने गुर्दे बेचना चाहते थे तथा आपरेशन से पहले चिकित्सकीय परीक्षण के लिए हाजिर भी हुए थे।

दरअसल कोई भी प्रौद्योगिकी हो—संचार, सूचना या चिकित्सा—पूंजीवादी व्यवस्था में सभी वैज्ञानिक कार्यकलाप पूंजी के चाकर हो चुके हैं। यही वजह है कि एक चिकित्सक, मात्र भुगतान पाने पर तनिक भी सोचे बिना न केवल 26 गुर्दे निकाल देता है बल्कि व्यापारी के लिए पैक भी कर देता है मानो यह मुर्गी के 26 अण्डे हों। यहां तक कि एक ही प्रौद्योगिकी पूंजीवादी व्यवस्था के विविध पायदानों पर खड़े लोगों से भिन्न-भिन्न बरताव करती है। यही वजह है कि हैदराबाद को 'साइबराबाद' बनाने वाली बुनियादी सुविधा—बिजली की 'लो वोल्टेज' आपूर्ति ही कुछ किसानों को आत्महत्या के लिए मजबूर कर चुकी है।

भत: एक बार फिर यही तथ्य साफ तौर पर उभरता है कि पूंजी की दुम से बंधा विज्ञान मानवीय संवेदनाशून्य और अन्तत: जन विरोधी ही हो सकता है।

● मुक्तिबोध मंच, पन्तनगर

स्वयंसेवी संगठनों से सावधान

(पृष्ठ 21 का शेष)

एन.जी.ओ. तंत्र का आज हमारे आम जीवन में काफी विस्तार होता जा रहा है। कुकुरमुत्तों की तरह स्वयंसेवी संगठन आज गली-मुहल्लों तक में उग रहे हैं। जो भी थोड़े दिन एन.जी. ओ. में काम करने का अनुभव प्राप्त कर ले रहा है, प्रोजेक्ट कांख में दबाये घूम रहा है—इस उम्मीद में कि कभी तो किस्मत का तारा चमकेगा। इसमें कोई भ्रम नहीं होना चाहिए कि ऐसे संगठन आज ठगों, भ्रष्टाचारियों और धोखेबाजों का स्वर्ग बने हुए हैं। **ये क्रान्तिकारी शक्ति होने का भ्रम पैदा कर समाज के उन्नत तत्वों को खींच रहे हैं। तमाम ईमानदार नौजवान समाज-सेवा के भ्रमों का शिकार हो इनके चंगुल में फंस रहे हैं और ये संस्थाएं उनकी संवेदनशीलता और सदिच्छाओं का भरपूर दुरुपयोग कर रही हैं।**

आज 'सहयोग' जैसी लाखों पतित एवं घृणास्पद स्वयंसेवी संस्थाएं भारत में सक्रिय हैं और अपने साम्राज्यवादी आकाओं के मंसूबों को पूरा करने और उनके सिंहासन को बचाये रखने के काम में लगी हुई हैं। **ऐसे में आज नौजवानों के लिए यह बेहद जरूरी है कि वे एन.जी.ओ. के साम्राज्यवादी कुचक्र को समझें और यह समझें कि साम्राज्यवादियों की छत्रछाया में और उनके टुकड़ों पर पलने वाली स्वयंसेवी संस्थाओं का वेतनभोगी बनकर समाज को नहीं बदला जा सकता। समाज में कोई भी परिवर्तन सिर्फ और सिर्फ जनता के खून-पसीने के दम पर और उसके द्वारा शोषक-उत्पीड़क व्यवस्था के ध्वंस द्वारा ही लाया जा सकता है।**

इतिहास के साथ एक बदसलूकी यह भी

(पृष्ठ 26 का शेष)

दी।'' (संस्मृतियां पृ. 97)

उक्त उद्धरण न केवल राजगुरू की संस्कृत शिक्षा की कथित 'तर्कतीर्थ' उपाधि वरन् तत्कालीन संस्कृत शिक्षा के पुरोधाओं की लोलुपता और गर्हित निकृष्टता की पोल भी खोल देता है। क्या राजगुरू संस्कृत शिक्षा की वकालत कर इन घाघ मकड़ों का जाल मजबूत करने का प्रयास कर भी सकते थे? इसका निर्णय पाठकों पर छोड़ता हूं।

फिर 'संस्कृति सत्य' के इस प्रयास का निहितार्थ क्या है? यही कि राजगुरू जैसे प्रखर समाजवादी को पुनरुत्थानवादी साबित कर अपने कठमुल्ला उद्देश्यों में विश्वसनीयता पैदा की जाये तथा शहीदों के बीच भी कृत्रिम अलगाव पैदा किया जाये।

एक बार हम फिर शिववर्मा वर्णित राजगुरू की जीवनी पर आते हैं—''छह वर्ष की अवस्था में राजगुरू के पिता का देहान्त हो गया था। पन्द्रह वर्ष की अवस्था में उन्होंने घर छोड़ दिया था। उनकी संस्कृत शिक्षा का अन्त आप ऊपर पढ़ चुके हैं। इसके बाद चार-पांच वर्षों तक क्रान्तिकारियों के सम्पर्क में ही नहीं रहे वरन् सक्रिय रहे। उस दौरान उनकी सक्रियता का अहसास इसी से हो जाता है कि उस दौरान दल के सबसे अहम ऐक्शन—'साण्डर्स वध' के मुख्य कर्ता थे। इसके बीच में वे कुछ समय एक म्यूनिसपल स्कूल के 'ड्रिल मास्टर' भी रहे थे।'' अब वचनेश त्रिपाठी जी ने तय कर लिया कि राजगुरू संस्कृत का प्रचार करें तो उन्हें करना ही पड़ा। अफसोस होता है कि जिस व्यक्ति को जीते जी समूची ब्रिटिश सत्ता नहीं झुका सकी, मौत के बाद एक कलमनवीस अपनी अंगुली के झटकों से उसके व्यक्तित्व में मनचाहे तोड़-मरोड़ पैदा कर रहा है।

वचनेश त्रिपाठी जी! जिस प्रकार पांच गोलियां जाया होने पर आप दुखी हो रहे हैं, मुझे लगा जैसे सरकारी 'आडिटरों' का दल हिन्दुस्तान समाजवादी प्रजातांत्रिक संघ के दस्तावेजों की जांच कर रहा है तथा उसकी जांच में यह नुक्स मिला कि भगतसिंह पर पांच गोलियां बकाया हों। हमारा कहना यह है कि वचनेश जी कि भगतसिंह की क्रान्तिकारी परम्परा के उत्तराधिकारियों पर केवल पांच गोलियां ही नहीं इस मुल्क के मजलूमों-गरीबों की मुकम्मल आजादी ही बकाया है, जिसका जिम्मा उन्हें इतिहास ने सौंप रखा है। साथ ही यह जिम्मा भी कि गोएबल्स के उत्तराधिकारियों को इतनी गहराई में दफ्न कर दें कि वे फिर से कब्र से बाहर न आ सकें। ●

इंकलाब के लिए जरूरी है एक इंकलाबी पार्टी
और इंकलाबी पार्टी के लिए जरूरी है एक इंकलाबी अखबार
पढ़िए
नई समाजवादी क्रान्ति का उद्घोषक **बिगुल** मूल्य : तीन रुपए
सम्पादकीय कार्यालय : 69, बाबा का पुरवा, पेपरमिल रोड, निशातगंज, लखनऊ